पंजीयन संख्या : 68939/98 अंक - 14, वर्ष 24

ज्ञान तत्व

समाज शास्त्र | अर्थ शास्त्र | धर्म शास्त्र | राजनीति शास्त्र

452

-: सम्पादक :-

बजरंग लाल अग्रवाल
रामानुजगंज (छ.ग.)

सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भीक पाक्षिक

पोस्ट की तारीख 31.07.2024
प्रकाशन की तारीख 16.07.2024
पाक्षिक मूल्य - 2.50/- (दो रूपये पचास पैसे)

<u>विविध विषयों पर मुनि जी के लेख</u>

राजनेताओं का नाटक और धन की बर्बादी : हम इस बात की चर्चा कर रहे हैं कि राजनीति पूरे समाज को दो गुटों में बताकर, उन दोनों गुटों के बीच विवाद पैदा करने में सफल कैसे हो जाती है। आम लोग क्यों नहीं समझ पाए कि राजनेता केवल नाटक कर रहे हैं, समाज में विभाजन कर रहे हैं। यह पक्ष विपक्ष नहीं है बल्कि यह समाज के विरुद्ध एक पक्ष हैं। इस संबंध में यदि हम विचार करेंगे तो हम देखेंगे कि न्यायपालिका भी एक नाटककार बन गई है। पिछले दो महीने में न्यायपालिका में सिर्फ अरविंद केजरीवाल की जमानत पर सरकार के सैकड़ो करोड रुपए खर्च हो चुके हैं, अन्य लोगों के जो खर्च हुए होंगे, वह अलग है। रोज ही किसी न किसी न्यायालय में जमानत की अर्जी लगी रहती है और न्यायालय भी उस जमानत पर सुनवाई का नाटक करता रहता है। भले ही हत्या, बलात्कार, मिलावट इनकी सुनवाई 20 साल में हो लेकिन अरविंद केजरीवाल की जमानत की सुनवाई तो तत्काल होनी चाहिए। इसी तरह हमने एक नाटक देखा कि एक अग्निवीर सैनिक के रूप में लड़ते हुए मर जाता है, उस अग्निवीर को अभी तक डेढ़ करोड़ रूपया तो सरकारों से प्राप्त हो चुका है और रू.50000 अलग से चेक बन रहा है, इसके बाद भी उस अग्निवीर के माता-पिता असंतुष्ट होने का ड्रामा कर रहे हैं। राजनीतिक दल भी इस तरह सिद्ध कर रहे हैं कि जैसे उस अग्निवीर ने कोई बहुत बड़ा बहादुरी का काम कर दिया हो। उस अग्निवीर को शहीद का दर्जा दिया जाना चाहिए, किसान भले ही खेतों में अनाज पैदा करते-करते मर जाए, कोई मजदूर मेहनत करते-करते मर जाए, वह शहीद नहीं माना जाएगा। एक अग्निवीर नौकरी करते हुए अगर शहीद हो जाता है तो उसे दो-दो करोड़ रूपया ऊपर से प्रशंसा पत्र, सम्मान पत्र और पता नहीं कितने सहानुभूति व सहायता के नाटक होते हैं। कल ही हम लोगों ने देखा कि विदेश से घूम कर आई हमारी टीम को सवा सौ करोड रुपए दिए गए। ऊपर से प्रधानमंत्री और मुख्यमंत्री और सब मंत्री उनको सम्मानित कर रहे हैं। जबकि यह उनका व्यापार है, उन्होंने कोई त्याग नहीं किया है, जीत गए हैं वह अलग बात है। यह राजनेता और कलाकार सब मिलकर मनमाना टैक्स लगा रहे हैं और मनमाना नाटकों पर पैसा बर्बाद कर रहे हैं। मेरे विचार से अब समय आ गया है कि सरकारों के मनमाना टैक्स लगाने पर किसी न किसी तरह का कोई नियंत्रण जरूर होना चाहिए जिससे कि ये

जमानत का खेल ना खेल सकें, जिससे यह खिलाड़ियों पर धन न लूटा सके, जिससे यह सैनिकों पर सीमा से अधिक धन बर्बाद ना कर सके।

अंधविश्वास के मूल में निकम्मे धर्मगुरु और नाटकबाज़ नेता : हाथरस में एक घटना होती है, एक स्वयंभू बाबा बड़ा दरबार लगाता है, लाखों लोग उसमें जुटे हैं भगदड़ होती है, 120 लोग कुचले जाते हैं, राजनेताओं और धर्मगुरुओं की दुकानदारी शुरू हो जाती है। यहाँ कुछ बातें विचारणीय है। पहली बात यह है कि देश में जो लोग यह कहते रहे हैं कि दलितों के साथ अत्याचार होता है, छुआछूत होती है, वे लोग आज कहीं छुप गए हैं क्योंकि स्वयंभू बाबा दलित था और मरने वालों में अनेक लोग ऐसे भक्त थे जो सवर्ण थे। स्पष्ट है कि स्वतंत्रता के बाद धीरे-धीरे दलित और सवर्ण का सामाजिक भेद बहुत कम हो गया है, भले ही राजनीतिक भेद बना हुआ हो। आज भी यदि कोई दलित अपने को पांडे लिखने लग जाए, ब्राह्मण मानना शुरू कर दे तो समाज इस पर आपत्ति नहीं करता लेकिन यदि कोई ब्राह्मण अपने को जाटव लिखना शुरू कर दे तो जाटव लोग आपत्ति करते हैं। मेरे विचार से आज की घटना यह उन लोगों के गाल पर एक तमाचा है जो लोग आज भी दलितों को शोषित कहते हैं। दूसरी बात यह है कि यह जो घटना घटी इसका दोष किसका है क्या इसके लिए सरकार दोषी है यदि देश में अंधविश्वास बढ़ रहा है तो इसका दोस तों उन स्वयंभू धर्मगुरुओं का है जिन लोगों ने अंधविश्वास दूर करने का ठेका लिया हुआ था। आखिर समाज में अंधविश्वास बढ़ क्यों रहा है सरकार का काम अंधविश्वास रोकना नहीं है, सरकार का काम अपराध रोकना है। यह निकम्मे धर्मगुरु सरकार को दोष देते हैं। मेरे विचार से कोई भी सरकार इस प्रकार की घटनाओं के लिए दोषी नहीं है। यदि किसी सत्संग में बिना बुलाए लाखों लोग आते हैं तो आने वालों का दोष अधिक है बुलाने वाले का कम और सरकार का और भी कम। मेरे विचार से हमारे धर्मगुरुओं को अब इस बात पर गंभीरता से सोचना चाहिए कि क्या अंधविश्वास के फैलने में उनकी नाकामी नहीं है। हमारे देश में निकम्मे राजनेताओं ने जातिवाद फैलाया है और निकम्मे धर्मगुरुओं ने अंधविश्वास। नाटक बाज राजनेता शोक संदेश दे रहे हैं और नाटक बाज धर्मगुरु सरकार की आलोचना कर रहे हैं।

यह कैसा संविधान है? : भारत में आमतौर पर बताया जाता है कि भारत का संविधान दुनिया का सबसे अच्छा संविधान है, भारत का संविधान अप्रत्यक्ष रूप से भगवान के बराबर है। भारत का संविधान बनाने में नेहरू और अंबेडकर जैसे महापुरुषों की भूमिका अधिक रही है। इस प्रकार की बातें मैंने जीवन में बहुत बार सुनी। मैंने खुद संविधान पर रिसर्च किया तो पाया कि यह कैसा संविधान है, जिसके अंतर्गत कोई मुख्यमंत्री जीवन भर जेल में रहते हुए भी मुख्यमंत्री बना रह सकता है? कोई अपराधी जेल में रहते हुए भी चुनाव लड़कर सांसद बन सकता है? यह कैसा संविधान है जो हत्या, बलात्कार, मिलावट जैसे मामलों में तो सबूत का भार पुलिस पर छोड़ता है और दहेज जैसे साधारण से मामले में सबूत का भार अपराधी पर डाला जाता है? यह कैसा संविधान है जो बंदूक और पिस्तौल बिना लाइसेंस के रखने वालों को छोटा अपराध घोषित करता है, उनकी जमानत सामान्य रूप से हो जाती है, लेकिन गांजा रखने वाले को वर्षों जेल में रखा जाता है उसकी जमानत साधारणतया जीवन भर नहीं हो पाती? ऐसे संविधान को कोई नासमझ ही भगवान कह सकता है, अन्यथा कहने वाले को यह उत्तर देना पड़ेगा कि इस संविधान में यह सब प्रावधान लागू है या नहीं। मैं आपसे स्पष्ट कहना चाहता हूँ कि यह जो संविधान है यह संविधान प्रारंभ में भी गलत बना और बाद में तो इस संविधान में सारा कूड़ा कचरा भर दिया गया। इसीलिए आज भारत का राजनेता चाहे वह कोई भी हो संविधान की पूजा करता है, संविधान को भगवान मानता है, संविधान को लेकर सड़कों पर घूमता है क्योंकि इस संविधान में ही उसको नेता बनने की छूट मिली है अन्यथा तो वह सड़कों के किनारे घूम रहा होता।

हमारे नेहरू परिवार के भक्त एक मित्र सत्य प्रकाश राजपूत जी हैं उन्होंने तीन बातें लिखी हैं। पहला संविधान बाध्यकारी नहीं होता मार्गदर्शक होता है, आप माने या ना माने। दूसरी बात कि जमानत लेना प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है, यह न्यायाधीश पर निर्भर करता है कि वह किस मामले में जमानत दे और किस मामले में ना दे। तीसरी बात कि कहां ऐसा प्रावधान है कि गांजा गंभीर अपराध है और बंदूक पिस्टल छोटा अपराध। मैंने तीनों बातों का अध्ययन किया। पहली बात संविधान हमेशा बाध्यकारी होता है, संविधान के अनुसार ही कानून बन सकता है अन्यथा कानून रद्द हो जाएगा। कानून का पालन करना बाध्यकारी है, स्वैक्षिक

नहीं। दूसरा जमानत देना न्यायाधीश पर निर्भर नहीं है बल्कि कानून में जो लोअर कोर्ट के मुकदमे हैं उनमें लोअर कोर्ट जमानत दे सकता है जो सेशन ट्रायल कैस हैं उसमें लोअर कोर्ट का न्यायाधीश जमानत नहीं दे सकता उसमें सेशन कोर्ट से ही जमानत होगी तीसरी बात कि अवैध बंदूक, पिस्तौल रखना यह छोटा अपराध बन गया है और अवैध गांजा रखना नारकोटिक्स का केस है उसमें जमानत नहीं मिल सकती है। यह मैंने तीनों बातों का उत्तर दिया है। आशा है कि इस विषय पर और चर्चा होगी।

झूठ को सत्य के समान स्थापित करने की जद्दोजहद : हम कल से भारतीय संविधान पर चर्चा कर रहे हैं भारतीय राजनीति में पंडित नेहरू सबसे अधिक चालाक नेता माने जाते हैं। आज तक चालाकी में पंडित नेहरू का कोई मुकाबला नहीं कर सका। पंडित नेहरू इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि समाज को गुलाम बनाकर रखने का सबसे अच्छा तरीका संविधान को गुलाम बनाना है इसलिए नेहरू ने सारी शक्ति लगाई कि संविधान को अपनी मुट्ठी में बंद रखा जाए। शुरुआत में भारतीय संविधान में प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति और मुख्य न्यायाधीश के स्वतंत्र अधिकार थे। न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका इन तीनों के प्रमुख लोग एक दूसरे का चेक एंड बैलेंस करने की ताकत रखते थे। नेहरू ने पटेल के मरने के बाद पूरी चालाकी से न्यायपालिका के पंख कतर दिए। न्यायपालिका की स्वतंत्रता समाप्त हो गई, इसके कुछ समय बाद ही नेहरू ने राष्ट्रपति के भी पंख कतर दिए। इसके पहले राष्ट्रपति को विशेष अधिकार था कि वह किसी भी गलत कानून को रोक कर रख सकता है, लेकिन नेहरू ने वह बाधा भी हटा दी और इस तरह नेहरू ने भारत में लोकतांत्रिक संसद के सारे रास्ते बंद करके, संसदीय लोकतंत्र स्थापित कर दिया। नेहरू हमेशा तीनों मामलों में सावधान रहते थे, पहला संविधान को अपने कब्जे में रखा जाए, दूसरा संविधान भगवान के रूप में है, यह बात हमेशा रोज दुहराई जाए। तीसरी अपनी बात को स्थापित करने के लिए साहित्यकारों, कलाकारों तथा अन्य बुद्धिजीवियों को अपने कब्जे में रखा जाए, तीनों काम नेहरू ने हमेशा किये। नेहरू के बाद इंदिरा ने भी यही राह पकड़ी और इंदिरा गांधी के बाद राहुल भी लगातार इस मार्ग पर चल रहे हैं। अब राहुल गांधी भी दिन-रात संविधान की दुहाई दे रहे हैं, राहुल गांधी भी एक ही झूठ को दिन-रात बार-बार दोहराते हैं, जिससे वह सच के समान स्थापित हो जाए। राहुल

गांधी भी अब साहित्यकारों, कलाकारों मीडिया कर्मियों इन सबको अपने साथ जोड़कर रखते हैं। जिससे राहुल गांधी का बार-बार बोला जाने वाला झूठ सत्य के समान स्थापित हो जाये। मैं 10 वर्षों से लगातार देख रहा हूँ कि राहुल किसी एक झूठ को वर्षों तक लगातार दोहराते रहते हैं और उनके शुभचिंतक उस झूठ को समाज में सत्य के समान स्थापित कर देते हैं।

जिस तरह कुछ धर्मगुरुओं ने मंदिर और भगवान को अपनी दुकानदारी का अच्छा साधन बना लिया है, उसी तरह राजनेताओं ने भी संसद और संविधान की लगातार दुकानदारी की है। इस संबंध में हमारे मित्र मुरारी लाल जी ने हम लोगों के साथ मिलकर दो छोटी-छोटी कविताएं लिखी थी। वह दोनों आपके सामने विचारार्थ प्रस्तुत है:-

कविता क्रमांक 1- संसद एक मंदिर, संविधान भगवान।
नेता, पुजारी और सबसे अच्छी दुकानदारी।

कविता क्रमांक 2-

राजनीति बन गई तवायफ, नेता हुये दलाल ।
ऐसे में क्या होगा भैया इस समाज का हाल ।।
सासद को एक पलंग समझ कर उस पर शयन किया,
संविधान को मान के चादर खींचा ओढ़ लिया,
आज तिरंगा बना हुआ है राजनीति की ढाल ।
ऐसे में क्या होगा भैया इस समाज का हाल ।।
अनाचार जो आज हो रहा लोकतंत्र के साथ,
सत्ता में हों या विपक्ष में सब का इस में हाथ,

किसी को भारत माता की इज्जत का नहीं खयाल ।
ऐसे में क्या होगा भैया इस समाज का हाल ।।
आज देश का नौजवान हैं कुंठित और निराश,
रहती अपने रोजगार की जिस को रोज तलाश,
सड़कों-सड़कों दफ्तर दफ्तर घूम रहा बेहाल,
ऐसे में क्या होगा भैया इस समाज का हाल ।।
लेकतंत्र को लूटतंत्र है बना दिया गद्दारों ने,
लोक यहाँ कैदी बन बैठा संसद की दीवारों में,

लोक फंसा है कानूनों में, तंत्र है मालामाल ।
ऐसे में क्या होगा भैया इस समाज का हाल ।।
लोक मंच आहवान कर रहा है कनहर के तीर,
नेता कर कानून सुधारो तभी मिटेगी पीर,
करो प्रतीक्षा अब आगे मत कहें मुरारी लाल ।
तब ही तो सुधरेगा भैया इस समाज का हाल ।।

कांग्रेस का संविधान प्रेम ड्रामा है : आजकल राहुल गांधी ने एक नया नाटक शुरू किया है। वह हर जगह हाथ में संविधान लेकर अपने को संविधान प्रेमी सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं। मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि राहुल ही नहीं राहुल का पूरा खानदान कितना संविधान प्रेमी है, वह मैंने स्वयं देखा है। पूरे देश भर की बात छोड़ दीजिए मैं रायपुर में छत्तीसगढ़ में रह रहा हूँ। रायपुर शहर छत्तीसगढ़ की राजधानी है। मैंने इनका संविधान प्रेम देखा है जब इनके खानदान के पंडित नेहरू प्रधानमंत्री थे उस समय छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले में प्रवीर चंद्रभंज देव कांग्रेस के विरुद्ध रहते थे। उन्हें सरकार ने पुलिस वालों से कह कर गोली मरवा दी। बेचारे पुलिस वाले लंबे समय तक परेशान रहे। दूसरी घटना मैं आपको बताऊं कि इंदिरा गांधी के कार्यकाल को दुनिया जानती है। मैं उस पर चर्चा नहीं कर रहा। मैं बता रहा हूँ कि राजीव गांधी का कार्यकाल जब मुझे कांग्रेस में शामिल होने की धमकी दी गई और मैं तैयार नहीं हुआ तो मुझे नक्सलवादी घोषित करके गोली मारने का आदेश दिया गया। उच्च न्यायालय ने मेरी सुरक्षा की और बेचारे कलेक्टर, एसपी तथा अन्य अधिकारी दसों वर्ष तक न्यायालय के चक्कर लगाते रहे। मैं तीसरी घटना बताता हूँ जब सोनिया गांधी पावर में थी और उनके इशारे पर सब कुछ चल रहा था। तब हमारे छत्तीसगढ़ में राम अवतार जग्गी को कांग्रेस में शामिल होने की धमकी दी गई। जब जग्गी नहीं तैयार हुए तो पुलिस वालों के द्वारा जग्गी को मरवा दिया गया। यही नहीं हमारे कांग्रेसी नेताओं और पुलिस वालों ने मिलकर पांच लोगों को इस बात के लिए तैयार किया कि वे लोग इस हत्या का जुर्म स्वीकार कर ले और उनको काफी धन दिया जाएगा। बाद में वह बेचारे पुलिस वाले अभी भी जेल में बंद है। चौथी घटना भी देखी होगी आपने। साल भर पहले जब राहुल गांधी पावर में थे तो राहुल गांधी के कार्यकाल में छत्तीसगढ़ में नकली शराब बनवाकर सरकारी विभागों से बिकवाई गई और कांग्रेस

पार्टी के लोगों ने पैसा ले लिया आज भी बेचारे अफसर जेल में बंद है। कैसा संविधान कैसा लोकतंत्र जहां सरकारी अफसरों से हत्याएं कराई जाती हैं सरकारी अफसरों से नकली शराब बिकवाई जाती है और बेचारे अफसर जेल में बंद रहते हैं। यह घटना नेहरू से लेकर राहुल तक के कार्यकाल की मैंने लिखी है। यह सभी घटनाएं छत्तीसगढ़ की है, पूरे देश की घटनाएं अगर लिखेंगे तो पता नहीं संविधान से भी बड़ा इतिहास बन जाएगा। इसके बाद भी नाटककार राहुल गांधी हाथ में संविधान लेकर चलते हैं।

नेहरु परिवार, मुसलमान और वामपंथ का गठजोड़ है कांग्रेस : स्पष्ट है कि मैं कांग्रेस का विरोधी कभी नहीं रहा, मैं नेहरू परिवार का विरोधी हूँ विशेष कर इसलिए कि इस परिवार में हमेशा साम्यवाद और इस्लाम के साथ मिलकर देश की व्यवस्था को बहुत नुकसान पहुंचाया। मेरे लिखे हुए लेख पर अनेक नेहरू भक्त बहुत उछल-कूद करते थे। अंत में मैंने थक-हार के एटम बम का उपयोग किया। कल मैंने उन सबके सामने इस खानदान की पोल खोल कर रख दी कि इस खानदान के लोग जब भी सत्ता में आए हैं इन लोगों ने किस तरह संविधान के साथ खिलवाड़ किया, किस तरह इस परिवार ने लोकतंत्र को पैरों तले कुचला। छत्तीसगढ़ के मैंने चार उदाहरण दिए थे सबसे अंतिम उदाहरण राहुल के कार्यकाल का है जब नकली शराब सरकारी दुकानों में सरकारी अफसरों के द्वारा बेची गई और उसका पैसा इस खानदान के चमचों को दिया गया, आज भी वे बेचारे अफसर जेल में है। इसके पहले जब सोनिया गांधी अध्यक्ष थी, उस समय सोनिया के एक चमचे ने छत्तीसगढ़ में मुख्यमंत्री के रूप में पुलिस वालों से एक कांग्रेस विरोधी की हत्या करवाई। हत्या करने के लिए पुलिस वालों ने उत्तर प्रदेश के अपराधियों को हायर किया, उन्हें लाया हत्या के बाद बचा कर उन्हें उत्तर प्रदेश पहुंचाया और पहुंचने के बाद यहां से पांच लोगों को न्यायालय में फर्जी खड़ा करके उनसे अपराध स्वीकृत कराया, उनको जेल में डलवाया। यह सब घटना करने वाले लोग जेल में अभी भी बंद है। यह है इस खानदान का लोकतंत्र। यह है इस खानदान का संविधान प्रेम। किसी चमचे में यह हिम्मत नहीं पड़ी कि मैंने जो लिखा है उसमें से चार में से इस किसी एक घटना का भी प्रतिवाद करें। एक चमचे ने यह कहा कि आप नरेंद्र मोदी के कार्यकाल की भी बात कीजिए। मैं उस चमचे को यह उत्तर देना चाहता हूँ कि मैं नरेंद्र मोदी की ही बात नहीं कर रहा मैं तो लाल बहादुर

शास्त्री, नरसिम्हा राव, मुरारजी देसाई, मनमोहन सिंह सरीखे प्रधानमंत्री की भी बात कर रहा हूँ। किसी कांग्रेसी प्रधानमंत्री के कार्यकाल में ऐसी आपराधिक घटनाएं घटित नहीं हुई जितनी इस खानदान के कार्यकाल में हुई है। मैं कांग्रेस मुक्त भारत के पक्ष में नहीं हूँ, मैं तो नेहरू खानदान मुक्त भारत के पक्ष में हूँ। मैं नरेंद्र मोदी के कांग्रेस मुक्त अभियान के खिलाफ हूँ। हमें इस नेहरू खानदान से मुक्ति की बात उठानी चाहिए। मैं इस खानदान के समर्थकों से भी कहना चाहता हूँ कि यदि उनमें हिम्मत है तो मेरे चार उदाहरणों में से किसी एक भी उदाहरण पर प्रश्न खड़ा करके देखें क्योंकि मेरे चारों उदाहरण नेहरू खानदान के नेतृत्व के कार्यकाल के हैं और चारों न्यायालय से प्रमाणित हो चुके हैं।

समाज के लिए किसी त्रासदी से कम नहीं साम्यवाद : मैंने अपने पूरे जीवन में साम्यवाद पर बहुत चिंतन मंथन किया। जीवन भर प्रयोग भी किया, मेरा निष्कर्ष यही है कि दुनिया की सबसे बड़ी समस्या साम्यवाद है। साम्यवादी सबसे अधिक तार्किक और चालाक होते हैं। इन्हें पैसे की लालच में नहीं मोड़ सकते यह बहुत ही कट्टर और दृढ़ होते हैं यह हर मामले में अविश्वसनीय होते हैं और किसी भी स्थिति में वह अपनी निष्ठा नहीं बदल सकते। साम्यवादियों की सात पहचान होती है पहली अनियंत्रित हिंसा और असत्य के पक्षधर, दूसरा केंद्रित सत्ता का समर्थन, तीसरा वर्ग विद्वेष को प्रोत्साहन, चौथा श्रम शोषण के नए-नए तरीके, पांचवा सामाजिक मान्यताओं को ध्वस्त करना, छठवां केंद्रित अर्थव्यवस्था और सातवां योग्यता और प्रतिस्पर्धा की स्वतंत्रता को बाधित करना। यदि किसी साम्यवादी में सात में से छः गुण हैं और एक नहीं है तो वह पक्का साम्यवादी नहीं है। इसलिए हमें इस संबंध में बहुत गंभीरता से समाधान खोजना होगा। साम्यवादियों को आप विचार मंथन या तर्क या संबंधों के आधार पर नहीं समझा सकते। उन्हें तो समाज से अलग-थलग करना ही आज की पहली आवश्यकता है। इस संबंध में यह आवश्यक है कि साम्यवाद के विरुद्ध अन्य सभी लोगों को एकजुट कर लिया जाए चाहे वह मुसलमान है, कांग्रेसी है, नेहरू परिवार का है, कोई भी अन्य हो जो साम्यवादियों की मदद करने वाले लोग हैं उन सब से सावधान रहने की जरूरत है, दूरी बनाकर रखने की जरूरत है। लेकिन हमारा लक्ष्य साम्यवाद के विरुद्ध दुनिया की एकजुटता में सहायता करना है। मेरे विचार से यदि केरल में कांग्रेस पार्टी साम्यवादियों का सफाया कर देती है तो हमें केरल में कांग्रेस का

विरोध नहीं करना चाहिए। मेरा आपसे निवेदन है कि हम साम्यवाद को अपना वैचारिक शत्रु समझें, नेहरू परिवार और इस्लाम को हम अपना विरोधी समझ सकते हैं, अन्य मोदी विरोधी राजनीतिक दल अरविंद केजरीवाल या अन्य लोग हमारे प्रतिस्पर्धी हो सकते हैं विरोधी नहीं, शत्रु तो बिल्कुल नहीं। सैद्धांतिक रूप से साम्यवाद का सिर्फ एक अकेला समाधान है लोक स्वराज। हम दुनिया में लोग समाज के लिए जन जागरण करते रहें। व्यावहारिक धरातल पर साम्यवादियों का एकमात्र समाधान है नरेंद्र मोदी का नेतृत्व। हम नरेंद्र मोदी पर विश्वास बनाकर चलें।

समान शिक्षा की मांग गलत : मैं बहुत लंबे समय से सुनता रहा हूँ कि भारत में सब लोगों को समान शिक्षा दी जानी चाहिए। वर्तमान समय में भी अनेक जिम्मेदार लोग इस प्रकार की बात उठाते रहते हैं। इस पर मैंने कई बार रिसर्च किया और पूरी तरह इस मांग को गलत पाया। समान शिक्षा क्यों उचित है और कैसे दी जा सकती है यह गंभीर विषय है। कल्पना करिए कि हमारे पास शिक्षा देने के लिए 1000 करोड़ का बजट है अब उस 1000 करोड़ के बजट में से हम यदि देश के सभी बच्चों को समान शिक्षा देंगे तो यह पूरा बजट हम पांचवी कक्षा तक पढ़ाने में समर्थ होंगे। प्रश्न यह उठता है कि जो लोग अपने खर्चे से स्वतंत्र शिक्षा देने की क्षमता रखते हैं उन लोगों को यदि स्वतंत्रता से पढ़ने दिया जाए और जो लोग ऐसी क्षमता नहीं रखते हैं उन लोगों पर यह बजट खर्च किया जाए तो यह थोड़े से बच्चे 11वीं तक मुफ्त और समान शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। क्या यह उचित होगा कि पूंजीपतियों को भी हम समान शिक्षा के नाम पर स्वतंत्र शिक्षा प्राप्त करने से रोक दें क्या इससे देश को लाभ होगा। क्या इससे गरीबों को लाभ होगा। समान शिक्षा का अर्थ क्या है? मेरे विचार से शिक्षा को स्वतंत्र होना चाहिए। प्रश्न उठता है कि यदि शिक्षा स्वतंत्र होगी तो गरीबों के बच्चे कैसे पढ़ेंगे गरीबों के बच्चे के लिए आप सरकारी स्कूल खोल सकते हैं या गरीबों के बच्चों को श्रम की शिक्षा भी दे सकते हैं। मेरे विचार से समान शिक्षा की आवाज उठाना पूरी तरह अव्यावहारिक है, गलत है। देश में सबको समान भोजन ना मिले, समान कपड़े ना मिले, समान आवास ना मिले और समान शिक्षा मिले यह कैसी बेतुकी बात है। इसलिए मेरा यह निवेदन है कि आप लोग समान शिक्षा की गलत बात का समर्थन न करें, शिक्षा को स्वतंत्र होना ही चाहिए, सरकार का हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए।

शिक्षा श्रमशोषण का हथियार बन गई है : मैंने आज शिक्षा और श्रम की तुलना करते हुए एक पोस्ट लिखा। कई लोगों ने टिप्पणियां की और उनमें से अधिकांश शिक्षा के महत्व पर जोर देते रहे। मैं इस बात को जानता हूँ जिन लोगों ने भी शिक्षा को बहुत महत्वपूर्ण बताया वे सब के सब बुद्धिजीवी है। उन्होंने हमेशा श्रम का शोषण करके बौद्धिक लाभ लिया है। दुनिया में हमेशा बुद्धिजीवियों ने श्रम का शोषण किया है। पश्चिम के देश सस्ती कृत्रिम ऊर्जा के माध्यम से डीजल, पेट्रोल, बिजली, केरोसिन, कोयला, गैस आदि इन सब प्राकृतिक वस्तुओं का उपयोग श्रम शोषण के लिए करते रहे हैं और भारत के बुद्धिजीवी जन्म अनुसार वर्ण व्यवस्था को आधार बनाकर श्रम शोषण में लगे रहे। आज भी भारत का अधिकांश बुद्धिजीवी श्रम शोषण की नीतियों का पक्षधर है वह श्रमजीवियों पर टैक्स लगाता है वह कृत्रिम ऊर्जा सस्ती रखता है। वह शिक्षा का बजट बढ़ाता है, नरेगा का बजट नहीं बढ़ाता। क्योंकि हर बुद्धिजीवी को श्रम शोषण में मजा आता है। मैं आपसे यह जानना चाहता हूँ क्या यह न्याय संगत है कि श्रम के मूल्य को न बढ़ने दिया जाए और बुद्धिजीवियों पर मनमाना खर्च किया जाए। क्यों नहीं बुद्धिजीवी और श्रमजीवी सबको स्वतंत्र छोड़ दिया जाए। सब एक-दूसरे का कंपटीशन करें। क्यों सस्ती कृत्रिम ऊर्जा के माध्यम से श्रम शोषण के नए-नए तरीके खोजे जाएं, यह बुद्धिजीवियों का पाप है। मैं निवेदन करता हूँ कि इस विषय पर गंभीरता से सोचिए कि गरीब, ग्रामीण, श्रमजीवी, कृषि उत्पादक के उत्पादन और उपभोग पर टैक्स लगाकर शिक्षा पर खर्च करना कितना न्याय संगत है।

तानाशाह बनी कांग्रेस दुनिया के सामने बेनकाब हुई : कल भारत में दो घटनाएं ऐसी घटी हैं, जिसने राहुल गांधी को चिंता में डाल दिया है। यह बात दुनिया जानती है कि राहुल गांधी बहुत नाटक कर रहे हैं लेकिन दोनों घटनाओं ने उनकी पोल खोल कर रख दी। एक घटना में भारत के सर्वोेच्च न्यायालय ने राजीव गांधी द्वारा किए गए उस संविधान संशोधन को पलट दिया जिसमें मुस्लिम महिलाओं को गुजारा भत्ता देने के मामले में अन्य लोगों से कुछ अलग अधिकार दिए गए थे। सुप्रीम कोर्ट ने यह स्पष्ट किया कि गुजारा भत्ता के मामले में धर्म के आधार पर महिलाओं से भेदभाव नहीं किया जा सकता है। पहले भी सुप्रीम कोर्ट ने यह फैसला दिया था जिसे अपने तानाशाही बहुमत के आधार पर राजीव गांधी ने पलट कर रख दिया था लेकिन अब सुप्रीम कोर्ट ने फिर से उस निर्णय

में बदलाव कर दिया है। दूसरी ओर कश्मीर में धारा 370 के मामले में राहुल गांधी हमेशा ढुलमुल रहे हैं। वह मुसलमान को 370 के पक्ष में बताते रहे और अन्य लोगों को 370 के मामले में हमेशा चुप रहे क्योंकि वह जानते थे कि अगर 370 का समर्थन किया जाएगा तो देशभर में उसका बुरा असर पड़ेगा। लेकिन कल इंडिया गठबंधन के एक बड़े कश्मीरी नेता उमर अब्दुल्ला ने यह साफ कर दिया है कि कश्मीर में वर्तमान आतंकवाद का कारण धारा 370 का समाप्त होना है। यदि धारा 370 फिर से लागू नहीं होगी तो कश्मीर में आतंकवाद बढ़ता रहेगा। स्पष्ट है कि आतंकवाद बढ़ने में उन लोगों का ही हाथ है जो धारा 370 का समर्थन करते हैं। मैं समझता हूँ कि राहुल गांधी के सामने यह एक दुविधा खड़ी हो गई है कि इन दोनों मामलों में वह मुंह बंद रखें या मुंह खोले।

इस्लाम का सांगठनिक विस्तारवादी सोच सबसे बड़ी समस्या : मैंने परसों एक पोस्ट लिखी थी जिसके अनुसार साम्यवाद, संगठित इस्लाम और नेहरू परिवार हमारे भारत की सबसे बड़ी समस्या है। साम्यवाद पूरी दुनिया की सबसे पहली समस्या है, इस्लाम आधे दुनिया की सबसे बड़ी समस्या है, जिसमें भारत भी शामिल है और नेहरू परिवार भारत की सबसे बड़ी समस्या है लेकिन यह जब तीनों एकजुट हो जाते हैं तो यह बहुत ज्यादा प्रभाव डालते हैं। कई मित्र मेरी बात से सहमत भी हुए लेकिन एक मित्र ने यह सुझाव दिया कि हमें इस्लाम को सबसे बड़ी समस्या नहीं मानना चाहिए क्योंकि सारे मुसलमान ना तो एक तरीके हैं और ना सारे मुसलमान को एकजुट करने की जरूरत है। साम्यवाद एक बड़ी समस्या है यह बात सच है नेहरू परिवार भी एक बड़ी समस्या है, कांग्रेस नहीं। यह बात भी सच है लेकिन इस्लाम का विस्तारवादी स्वरूप ही समस्या है। धार्मिक इस्लाम हमारे यहां भारत में या दुनिया में कोई समस्या नहीं है। मैंने अपने मित्र के सुझाव पर गंभीरता से विचार किया। मुझे भी यह लगा कि यह सच बात है कि सारे मुसलमान एक तरीका नहीं है यद्यपि मुस्लिम बहुमत सांप्रदायिक हो गया है लेकिन सभी मुसलमान को सांप्रदायिक कह देना या मान लेना उचित नहीं है इसलिए मैंने यह उचित समझा कि मैं भविष्य में इस्लामी विस्तारवाद को दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी समस्या मानूंगा जो मुसलमान संगठित नहीं है, धार्मिक हैं वह हमारे लिए किसी भी प्रकार की कोई समस्या नहीं है यद्यपि उनसे भी हमें सावधानीपूर्वक व्यवहार करना चाहिए क्योंकि बचपन से ही उनके अंदर

सांप्रदायिकता, विस्तारवाद और संगठनवाद कूट-कूट कर भर दिया जाता है। फिर भी जो लोग आचरण में इन तीनों से अलग दिखते हैं, उन लोगों के साथ किसी तरह का भेदभाव करना उचित नहीं है। मैं अपने पिछले लिखे लेख में संशोधन करने के लिए तैयार हूँ। अब मेरे विचार इस तरह पढ़े जाने चाहिए कि दुनिया में खासकर भारत में साम्यवाद, विस्तारवादी इस्लाम और नेहरू परिवार सबसे बड़ी समस्या है।

देश शरियत या संविधान से चलेगा : यह बात बिल्कुल साफ हो गई है कि वर्तमान चुनाव के नतीजे आने के बाद सांप्रदायिक मुसलमानों का मनोबल बहुत अधिक बढ़ा हुआ है। उन्हें ऐसा दिखाई देता है कि जैसे अब नेहरू परिवार की सत्ता भारत में स्थापित हो गई है उन्हें यह भी दिखाई देता है कि नेहरू परिवार के नेतृत्व में फिर से भारत में मुगल राज्य की नींव रखी जा सकती है। उन्हें यह भी दिखाई देता है कि भारतीय राजनीति में नेहरू परिवार ही उनका एकमात्र सहारा है। कल सुप्रीम कोर्ट ने शाहबानो मामले में बदलाव करते हुए यह निर्णय दिया था कि कानून के अनुसार हिंदू या मुसलमान महिलाओं में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिए। कानून की दृष्टि से दोनों को समान रूप से देखने की जरूरत है। आज ही देश के कई कट्टरपंथी मुसलमानों ने इस निर्णय के विरुद्ध आवाज उठाई है। उन लोगों ने यह घोषणा की है कि सुप्रीम कोर्ट का यह आदेश शरियत के खिलाफ है और भारत शरियत के आधार पर चलेगा। इस मामले में अभी तो राहुल गांधी चुप हैं, अवसर की प्रतीक्षा कर रहे हैं लेकिन अगर उन्हें अवसर मिलेगा तो जरूर वह भी शरियत के हिसाब से अपनी आवाज उठाना शुरू कर देंगे। यह देश का दुर्भाग्य है कि भारत शरियत के आधार पर चलेगा। यह बात कट्टरपंथी मुसलमान उठा रहे हैं, कम्युनिस्ट इस मामले में चुप हैं और राहुल गांधी से भी ऐसी ही संभावना दिख रही है कि वे शरियत को ही महत्व देंगे। भारत के आम नागरिकों को यह बात तय करनी पड़ेगी कि भारत संविधान से चलेगा, कानून से चलेगा या शरियत से चलेगा।

पूंजीपतियों का कोई कर्ज माफ नहीं हुआ : यह बात बार-बार कही जाती है कि सरकार ने पूंजीपतियों को बहुत पैसा माफ कर दिया और गरीबों को कुछ नहीं दिया जबकि यह बात पूरी तरह गलत है। मैंने इस संबंध में बहुत अध्ययन किया

तो पाया कि किसी भी पूंजीपति का पैसा माफ नहीं किया गया है। जो भी पैसा माफ किया गया है वह कंपनियों का किया गया है और कंपनी किसी पूंजीपति की नहीं होती बल्कि आम लोगों के शेयर से बनी होती है। इसका मतलब यह है कि कंपनियों में आम जनता का हिस्सा होता है, सिर्फ पूंजीपतियों का नहीं। दूसरी बात यह भी पता चली कि कंपनियां जितना टैक्स देती हैं उस टैक्स का एक प्रतिशत भी माफ नहीं किया गया है। यह जो माफ किया गया है वह सिर्फ उन कंपनियों का किया गया है जो कंपनियां फेल हो गई थी। यह टैक्स बीस वर्ष में एक बार माफ किया गया है, ना कि एक वर्ष का बकाया माफ हुआ है। प्रश्न यह उठता है कि पिछले बीस वर्षों में कंपनियों ने कितना धन सरकार को दिया और उसमें से कितना माफ हुआ और जो माफ हुआ वह कितना पूंजीपतियों का हुआ, कितना आम नागरिकों का हुआ यह बात भी विचारनीय है। मुझे आश्चर्य होता है कि जिन लोगों के धन से मुफ्त में यह अनाज या अन्य सामग्री दी जाती है, वह मुफ्त का खाने वाले लोग उन दानदाताओं को गाली देते हैं जिनके पैसे पर इनका घर चलता है इसलिए यह सच्चाई सामने आनी ही चाहिए कि पूंजीपतियों के किसी भी प्रकार का कोई पैसा माफ नहीं किया गया है।

कुशल प्रशासक की छवि बिगड़ने से घटी लोकप्रियता : यह बात साफ हो गई है कि पिछले कुछ समय से नरेंद्र मोदी की लोकप्रियता में गिरावट आई है। मुख्य विषय है कि इस गिरावट का कारण क्या है। मेरे विचार से भारत की जनता ने नरेंद्र मोदी, योगी आदित्यनाथ और अमित शाह में एक योग्य प्रशासक की भूमिका समझी थी। आम लोगों ने यह विश्वास किया था यह लोग हमें न्याय और सुरक्षा की गारंटी देंगे, भ्रष्टाचार दूर करेंगे। जिस तरह इन तीनों ने मिलकर दस वर्षों तक सरकार चलाई उसके कारण आम लोगों में यह विश्वास बहुत तेजी से मजबूत हुआ कि यह तीनों की जोड़ी हमें सुरक्षा की गारंटी दे सकती है। लेकिन पिछले दो-तीन महीना से यह बात साफ दिखने लग गई कि इस जोड़ी को हिंदुत्व की अधिक चिंता है, मंदिरों की अधिक चिंता है, सुरक्षा की नहीं। यह लोगों के अंदर बदलाव सहन नहीं हो रहा है। भारत की जनता सुरक्षा चाहती है, भ्रष्टाचार से मुक्ति चाहती है, सांप्रदायिकता से मुक्ति चाहती है, लेकिन यदि आप सबसे ऊपर मंदिर रखेंगे, यदि आप सबसे ऊपर हिंदू मुसलमान रखेंगे तो अवश्य ही लोगों के विचारों में बदलाव आ सकता है। भ्रष्टाचार के मामले में अब तक नरेंद्र मोदी ठीक

दिशा में चल रहे हैं, ईडी, सीबीआई का खुलकर प्रयोग हो रहा है, भ्रष्टाचारी जेल जा रहे हैं लेकिन इसके बाद भी पिछले दो महीने से कुछ ना कुछ आम लोगों के भरोसे में फर्क पड़ा है। मैं चाहता हूँ कि नरेंद्र मोदी, योगी आदित्यनाथ और अमित शाह की जोड़ी फिर से लोगों को सांप्रदायिकता, भ्रष्टाचार और असुरक्षा से मुक्ति की गारंटी दे, मंदिर तो अपने आप मिल जाएगा, वह कोई बड़ी बात नहीं है।

<u>ज़ूम कार्यक्रम से:</u>

१. रात्रि कालीन चर्चा कार्यक्रम में इस बात पर विचार किया गया कि सामाजिक शक्ति का अन्य इकाइयों के साथ तालमेल होना चाहिए एवं क्षमता और योग्यता अनुसार विकसित एवं वितरित होनी चाहिए। परिवार, गांव, जिला, प्रदेश, केंद्र आदि समाज की अलग-अलग इकाइयां है। इन इकाइयों के साथ जब तक सामाजिक अथवा राजनीतिक शक्ति का न्यायपूर्ण संबंध विकसित नहीं होगा तब तक समाज में अन्याय देखने को मिलेगा। समाज में असुरक्षा का भाव रहेगा।

नेतृत्वकर्ता समाज से ही आता है, भले ही उसके रास्ते और क्षेत्र अलग-अलग हों। कुछ लोग सामाजिक शक्ति का लाभ लेकर राजनीति में दबदबा बना लेते हैं और कुछ लोग सामाजिक क्षेत्र में ही रहकर अपने प्रभाव और शक्ति को समाज की सुरक्षा और सेवा आदि में लगा देते हैं। कहते हैं कि होनहार विरवान के होते चिकने पात। व्यक्ति का निर्माण परिवार में होता है और प्रारंभ से ही वह सब कुछ सीखना शुरू करता है, जो सीखा है, देखा है वही वह आगे चलकर व्यवहार में लाता है, समाज से मिले उनके एक विशेष अस्तित्व, नाम और महत्व को स्वीकार कर लिया जाता है। यही उनका व्यक्तित्व तैयार होता है और इसी व्यक्तित्व के आधार पर उनका भविष्य निर्भर करता है।

आज के विकसित समाज में नैतिकता गिरती जा रही है और भौतिकता बहुत तेजी से बढ़ रही हैं। सारी दुनिया में मानवता का स्तर गिरते जा रहा है। व्यक्ति के स्वभाव में ताप वृद्धि और स्वार्थ वृद्धि सारी दुनिया में बढ़ती जा रही है। जहां राजनीति के क्षेत्र में सक्रिय लोग जिस तेजी से खुद गिरते हुए समाज को गिराने का प्रयास कर रहे हैं वहीं दूसरी ओर धार्मिक लोग भी इन लोगों से मिलकर झूठ का बवंडर खड़ा करने में लगे रहते हैं। इसलिए आज समाज की स्थिति बहुत ही डांवाडोल है। सब कुछ सोच-समझ कर यही उचित लगता है कि सामाजिक शक्ति पर भी नियंत्रण होना ही चाहिए। सहजीवन की अवस्था में उस

सामाजिक इकाई से जुड़े हुए अन्य इकाइयों के बीच समन्वय हो, यह सुनिश्चित होना चाहिए। यह बहुत ही व्यावहारिक तथ्य है कि शासन के उच्चतम बिंदु और निम्नतम बिंदु के बीच दूरी जितनी अधिक होगी शोषण की मात्रा और भ्रष्टाचार भी उतनी अधिक होगी। यदि इकाइयों के बीच दूरी कम होगी तो उसके बीच विश्वास भी बढ़ेगा और शोषण और भ्रष्टाचार की मात्रा भी कम होगी। व्यवस्था के विकेंद्रीयकरण से शक्तियों का बंटवारा होगा और कोई भी इकाई तानाशाही का काम नहीं कर पाएगी। लोक स्वराज्य की स्थापना के लिए शक्तियों का विकेंद्रीकरण आवश्यक है चाहे वह राजनीतिक शक्ति हो, आर्थिक शक्ति हो अथवा सामाजिक शक्ति। चर्चा में हम 18 साथी जुड़े थे, तीन साथी मेरे फेसबुक पर भी लाइव थे, चर्चा सवा नौ बजे समाप्त हुई।

२. रात्रि कालीन चर्चा कार्यक्रम में गांव जिला, प्रदेश या केंद्र सरकार, केंद्र, राज्य, राष्ट्र एवं समाज विषय पर विचार विमर्श किया गया। विषय को काफी सरलता से रखा गया कि समाज की कोई भी इकाई स्वतंत्र नहीं है। पूरी दुनिया में यह महसूस किया जा रहा है कि आदमी अपने मन से चल ही नहीं सकते हैं। उनके ऊपर कानून का, राज्यतंत्र के अतिशय हस्तक्षेप और सामाजिक मान्यताओं एवं सिद्धांत या धारणाओं इत्यादि का इतना प्रभाव होता है कि वह उसी में दब जाता है। जिस तरह हमारे शरीर के चारों तरफ हवा का दबाव है ठीक उसी प्रकार हमारे मन के ऊपर भी इन सब का इतना दबाव होता है कि व्यक्ति बिना किसी को नुकसान पहुंचाए भी स्वतंत्र नहीं है, कानून कहीं ना कहीं से उनके सिर पर सवार है।

परिवार में व्यक्ति का निर्माण होता है लेकिन परिवार तंत्र के कानून से संचालित होता है। गांव का अस्तित्व सृष्टि के प्रारंभ से ही है, राज्य और राष्ट्र तो बाद में आया, सब गांवों से मिलकर ही समाज बना। समाज को तब इतना ही समझ पाए थे। हमारा दृष्टिकोण विकसित हुआ और सारी दुनिया इसमें समा गई। वर्तमान समय में हम हर मामले में इतना आगे बढ़ चुके हैं कि सारा विश्व ही एक समाज हो गया है। विश्व का कोई भी नागरिक इस मानव समाज से अलग नहीं है। लेकिन आज समाज के बीच सीमाएं खड़ी की गई है। आज समाज के भाग और प्रकार बना दिए गए हैं। राष्ट्र और राज्य की गलत अवधारणाएं समाज को तोड़ती है, बांटती है। राष्ट्र, राज्य और धर्म ने समाज के अस्तित्व को नकार

दिया है। राज्य समाज के सुव्यवस्थित संचालन, न्याय और सुरक्षा के लिए जिम्मेदार है लेकिन जिम्मेदारी नहीं निभा रहा है। गुणात्मक धर्म की जगह प्रतीकात्मक धर्म हावी हो गया है, फलतः लोग धर्म को समझे बिना धर्म के नाम पर मारकाट मचा रहे हैं। समाज का तो कोई अस्तित्व ही नहीं है इसीलिए समाज मूकदर्शक की तरह सब देख रहे हैं, कुछ कर नहीं पा रहे हैं। इसलिए समाज को सशक्त बनाने की जरूरत है तभी समाज की सभी इकाइयां ढंग से काम करेगी और वास्तविक स्वराज्य देखने को मिलेगा। समाज एक शरीर है तो प्रत्येक इकाई उस शरीर का अंग है। कोई भी अंग खराब हो तो तकलीफ पूरे शरीर को होती है इसलिए अपने दृष्टिकोण को बदलने की जरूरत है। इन राजनेताओं ने, धर्म नेताओं ने जिन परिभाषाओं को बदल दिया है, समाज को भ्रम में डाल दिया है उससे बाहर निकालने की जरूरत है।

चर्चा को आगे बढ़ते हुए ज्ञानेंद्र भाई ने यह प्रश्न उठाया कि राज्य और राष्ट्र में क्या अंतर है क्योंकि कभी राज्य तो कभी राष्ट्र शक्तिशाली होकर समाज को नियंत्रित करते रहता है। नरेंद्र भाई और मुनि जी ने इस विषय पर अपनी राय दी, मोहन गुप्ता ने प्रश्न किया कि केंद्र, राज्य, राष्ट्र में आदि शब्दों के अर्थ और प्रयोग के बारे में कुछ साथी अपनी बात रखें ताकि विषय और अधिक क्लियर हो और सब की समझ में आए। मुनि जी ने राष्ट्र और राज्य के विषय में बहुत अच्छी-अच्छी बातें बताईं। उन्होंने कहा कि राज्य व्यक्ति से लेकर समाज तक की सुरक्षा की गारंटी देता है, राज्य का दायित्व है सुरक्षा देना, यह कर्तव्य नहीं है। राज्य इसके लिए दंड दे सकता है, राज्य भी समाज का ही एक अंग है। राष्ट्र कर्तव्य कर सकता है लेकिन राष्ट्र समाज व्यक्ति के सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकता है उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति के दायित्व पर भी अपनी राय दी और कहा कि प्रत्येक व्यक्ति का दायित्व है कि वह राज्य के साथ जुड़कर हर दूसरे आदमी की सुरक्षा में मदद करें। राष्ट्र समाज का प्रतिनिधित्व करता है, राष्ट्र का केवल कर्तव्य होता है और समाज सर्व व्यक्ति समूह है। राज्य सुरक्षा और न्याय तक सीमित है जबकि राज्य को समाज का प्रतिनिधि मान लिया गया। लेकिन राज्य को बराबर सर्वेसर्वा साबित करने की कोशिश की गई, जो गलत है। राज्य को अधिकार लोक देता है व्यक्ति नहीं और राष्ट्र को अधिकार व्यक्ति देता है लोक नहीं। राज्य एक आवश्यक बुराई है लेकिन राज्य के बिना समाज की व्यवस्था नहीं चल सकती

इसलिए राज्य को स्थान देना ही पड़ता है। राज्य के विना हम समाज की बात सोच भी नहीं सकते हैं क्योंकि राज्य नहीं रहेगा तो समाज को सुरक्षा और न्याय कौन देगा। राष्ट्र एक सामाजिक इकाई है जबकि राज्य प्रशासनिक इकाई है। हजारों साल से पहले इनकी दी गई परिभाषाओं में हम सुधार कर सकते हैं। राष्ट्र को समाज का अंग होना ही चाहिए। राज्य को बुराई मानते हुए भी उसके अस्तित्व को मनाना ही चाहिए, कम से कम हस्तक्षेप भले ही उसका शून्य क्यों न हो जाए। राष्ट्र एक सीधी रेखा है ऊपर जाने की, समाज के तरफ पहुंचने की जबकि राज्य एक मजबूरी है। नरेंद्र भाई ने देश के संप्रभुता की बात कही और उन्होंने कहा क्योंकि संप्रभु संपन्नता की शक्ति केवल केंद्र के पास होती है इसलिए देश की केंद्रीय सरकार या केंद्रीय तंत्र संप्रभु सरकार होती है बाकी सभी इकाइयां व्यवस्था की सहायक होती है। विश्व शांति की स्थापना कैसे हो, इस क्रम में नरेंद्र मोदी और पुतिन का संवाद भी उदाहरण के रुप में रखा गया। अंत में बाबा ने बताया कि समाज दो धाराओं पर चल रही है - पहले धारा में राज्य मजबूत होता है और दूसरी धारा पर चलने से समाज मजबूत होता है इसलिए हमें उस धारा को पकड़ना चाहिए, उस लाइन पर चलना चाहिए जिससे समाज मजबूत हो रहा हो यानी परिवार, गांव, जिला, प्रदेश, राष्ट्र और सबसे ऊपर समाज। समाज वाली लाइन अच्छी लाइन है जबकि आज दूसरी लाइन पर सारी दुनिया चल रही है जिसमें व्यक्ति और राज्य ही सर्वाेपरि है, इस लाइन में राज्य पर आकर सब कुछ सिमट जाता है। कार्यक्रम में फेसबुक पर हमारे साथी प्रकाश सिंह, अरुण ठाकुर और रुपेश कुमार अंत तक जुड़े रहे। चर्चा कार्यक्रम सफल रहा।

पत्रोत्तर

पत्र संख्या 1. सत्यपाल शर्मा, बरेली, उ.प्र.

प्रश्न - भारतीय संसदीय लोकतंत्र के संबंध में आपके दूरदर्शी विचार, सुझाव और जन जागरण अभियान का हृदय से स्वागत करता हूँ और सर्वशक्तिमान ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि आपको उत्तम स्वास्थ्य एवं दीर्घ जीवन प्रदान करें, जिससे हमें आपका बहुमूल्य मार्गदर्शन मिलता रहे।

आज भारत का लोकतंत्र गलत दिशा में जा रहा है। वोट पाने के लिए राष्ट्रीय संपत्ति को मुफ्त में बांटा जा रहा है। चुनाव के समय प्रत्येक दल चुनाव जीतने के लिए जनता को प्रलोभन देता है। सत्यता यह है कि नरेंद्र मोदी और

योगी जी को छोड़कर भारत में अन्य कोई लोकप्रिय नेता नहीं है। विकास के नाम पर धन का दुरुपयोग हो रहा है, भ्रष्टाचार बढ़ता जा रहा है, विकास के नाम पर पर्यावरण को नुकसान पहुंचाया जा रहा है। इसी कारण बीमारियां और प्राकृतिक प्रकोप बढ़ते जा रहे हैं। मानवता, नैतिकता, भाईचारा, सदाचार तेजी से घट रहा है। शिक्षा का स्तर गिरता जा रहा है, आप जैसे दिव्य द्रष्टा हम सबको सचेत कर रहे हैं।

उत्तर - आपने बिल्कुल ठीक लिखा है, लेकिन यह समस्या सिर्फ भारत की नहीं है। लोकतंत्र भारत में पश्चिम से आया है, भारत की मौलिक व्यवस्था नहीं है। मौलिक व्यवस्था तो है लोक स्वराज्य, जो भारत में अभी तक शुरू नहीं हो पाया। भारत को चाहिए कि वह साम्यवाद की तानाशाही या पश्चिम के अर्द्ध-कचरे लोकतंत्र की जगह पर लोक स्वराज्य प्रणाली का प्रयोग करे। आपने जो समस्याएं लिखी है उन सबका यही सबसे अच्छा समाधान है। इस संबंध में कुछ महीनो में ही एक "प्रयोग" नामक फिल्म पर्दे पर आने वाली है। आप उस फिल्म को भी देख सकते हैं और अपने विचार भी व्यक्त कर सकते है।

पत्र संख्या 2. शिव दत्त, बाघा, बांदा, उ.प्र., मो. नं. 9651186738

ज्ञान तत्व 16 मई, सं.- 448 में केजरीवाल की भूरी-भूरी प्रशंसा है, यह जानते हुए भी कि जिस केजरीवाल का जन्म सार्वजनिक मंच पर अन्ना हजारे के भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन के दौरान हुआ वही केजरीवाल कालांतर से भ्रष्टाचार यानी शराब घोटाले में डूबे हुए साबित हुए। स्पष्ट रूप से कहूँ तो इस देश में इस समय राजनीति से बड़ा कोई अन्य चोखा धंधा नहीं है। व्यावसायिक प्रवृत्ति के व्यक्ति सब इधर ही भागे चले आ रहे हैं और देश समाज को लूटकर अपने-अपने आर्थिक साम्राज्य खड़े करने में लगे हुए हैं। कहने की जरूरत नहीं कि ईस्ट इंडिया कंपनी ब्रिटेन की व्यावसायिक लोगों की एक कंपनी थी। जिसने धन के बल पर व अपनी कूटनीटिक चालों से दीर्घकाल तक भारत में शासन किया। धन की ताकत का सबको पता है। वो तो 1857 के बाद ही ब्रिटेन के शासन में भारत में दखल दिया। कहने का तात्पर्य यह है कि भारतीय राजनीति में व्यावसायिक प्रवृत्ति के लोग ज्यादा है, नेता कम। केजरीवाल की पहली सरकार बनने के कुछ समय बाद मैंने आपको पहले भी चिट्ठी लिखी थी और गोपाल राय के विषय में आपसे चर्चा की थी और यह भी कहा था कि केजरीवाल सरकार की नीव भ्रष्टाचार पर रखी गयी

है। इसकी तफसील भी दी थी कि किस तरह गोपाल राय ने हमारे जिले में भ्रष्टाचार करके करोड़ों रुपए कमाए और बाद में अरविंद केजरीवाल के चुनाव में खर्च किया। फिर भी आपने इस भ्रष्टाचार को महत्व नहीं दिया। इसलिए मेरा यह मत है कि अरविंद केजरीवाल की पूरी टीम की छवि भ्रष्टाचार में डूबी हुई है। ऐसे ही लोग राजनीति में है जिनकी छवि साफ-सुथरी नहीं है। देश को तोड़ने के प्रावधान लॉर्ड माउंटवेटन के दबाव में पहले ही जोड़ दिये गए हैं। जैसे देश का नाम परिवर्तन, जिससे देश के लोगों का कोई भावनात्मक जुड़ाव नहीं हो सकता, क्योंकि बलिदान तो भारत माता की जय बोल कर दिया गया है। इसी तरह जातीय आधार पर आरक्षण। माउंटवेटन के सामने ही सब घट रहा था। उन्हें ठीक से पता था कि यदि सांप्रदायिक आधार पर देश बंट सकता है तो जातिगत आधार पर क्यों नहीं? इसीलिए जातिगत भेद को जिंदा रखना जरूरी है। शिक्षा, नौकरी, राजनीति में जातिगत आधार पर आरक्षण का प्रावधान करने से बेहतर जाति भेद को जीवित रखने का और कोई अन्य ऐसा नायाब तरीका हो ही नहीं सकता। भले आप व अन्य कोई इस बात से आँख मूद ले कि जो भी इस देश में चल रहा है सब जातीय आधार पर खुल्लम-खुल्ला चल रहा है। यूपी में अखिलेश यादव का पी डी ए इस जातीय गोलबंदी का सबूत है और यह भी कि किस तरह से लोग लोकतंत्र के मायने निकाल रहे हैं। इस संदर्भ में देखना मुनासिब होगा कि देश के नाम परिवर्तन का फैसला किस तरह संविधान सभा अपनी हद से बाहर जाकर करने में रुचि दिखाई। जबकि नाम परिवर्तन का विषय संपूर्ण देश का विषय था न कि किसी चुनी हुई संस्था का। कोई चुनी हुई संस्था देश नहीं हो सकती। किंतु यही संविधान सभा लोकतंत्र के लोक की परिभाषा देने से बची। परिणामस्वरुप आजादी के बाद सत्ता देश के असली वारिस "लोक" के हाथों में न पहुंचकर अभिजात्य वर्ग तथा आर्थिक साम्राज्यवादियों के गठबंधन को ट्रांसफर हो गयी। यदि लोक के हाथ सत्ता जाती तो आरक्षण जैसे प्रावधानों की कोई आवश्यकता ही न होती। आज देश के हालात ऐसे बनते जा रहे हैं जहां जातीय लामबंदी दिनों-दिन बढ़ती जा रही है और अपनी-अपनी सेना भीम सेना, पटेल सेना, करणी सेना, परशुराम सेना जैसी अनेकानेक सेनाएं तैयार खड़ी है। कब कहां देश का माहौल खराब हो जाए, कोई कुछ नहीं कह सकता। अभी संपन्न हुए लोकसभा चुनाव में जातीय प्रभाव स्पष्ट होकर सामने आया। इतनी गहरी कटुता जो गांव के गवारों

में भी देखने को नहीं मिलती। लोकतंत्र की ऐसी भद्दी तस्वीर के विषय में कभी किसी ने सोचा तक न होगा। समझने से इनकार करना संभव नहीं कि किस कदर एक दिशाभ्रमित महिला की गुंडई ने पूरे पश्चिम बंगाल को हिलाकर रख दिया है जहां राज्यपाल भी खुद को असुरक्षित महसूस कर रहे हैं। लोकतंत्र के ऐसे अर्थ निकाले जाएंगे किसी को पहले पता था क्या? अब अगर ऐसी राजनीतिक गुंडई पर लगाम लगाने के लिए कोई कानून नहीं बनता, तो न ही लोकतंत्र बचेगा, न देश।

आप जैसे विद्वानजनों को देश की इन्हीं ज्वलंत मुद्दों पर गंभीरता के साथ चिंतन-मनन करना चाहिए और अपने सुझावों से मार्गदर्शन प्रस्तुति देनी चाहिए। आदर्श के लिए फुर्सत के क्षण चाहिए जो किसी के पास नहीं दिख रहा है।

उत्तर - मैंने ज्ञान तत्व 447 में कहीं भी अरविंद केजरीवाल को ईमानदार नहीं लिखा है। मैंने लिखा है कि वह बहुत अधिक चालाक बल्कि आंशिक रूप से धूर्त है। इसीलिए वह राहुल गांधी की जगह विपक्षी नेता के रूप में अधिक सफल हो सकते हैं। आप बताने की कृपा करें कि विपक्षी नेता के रूप में अरविंद केजरीवाल की जगह पर और किस नेता को आगे किया जाना चाहिए? आपने जातिवाद और लोकतंत्र पर जो टिप्पणी की है उससे मैं सहमत हूँ। मैं भी आरक्षण के खिलाफ हूँ, लेकिन वर्तमान परिस्थितियों में आपने आदर्शवाद को सबसे ऊपर रखा है, इससे मैं सहमत नहीं हूँ। वर्तमान चुनाव में अधिक आदर्शवादी मार्ग पकड़ने के कारण ही विपक्ष मजबूत हुआ क्योंकि भारत में लोकतंत्र है, तानाशाही नहीं। तानाशाही में आदर्शवाद उपयोगी हो सकता है, लेकिन लोकतंत्र में तो यथार्थवाद ही अपनाना पड़ेगा। यदि नरेंद्र मोदी आदर्शवाद की जगह यथार्थवाद पर आगे चलते तो अधिक सफल हो सकते थे। इसलिए मेरा आपसे सुझाव है कि वर्तमान परिस्थितियों में आदर्शवाद को छोड़कर यथार्थवाद अथवा संतुलन बनाकर समय की प्रतीक्षा करनी चाहिए।

जीवनपथ

और यदि पन्थ को निरपेक्ष कहा जाए तो तुम इसे किस दृष्टिकोण से देखोगे विवेक! सिमी उससे पुनः प्रश्न करती है।
हम पन्थ को अपने शब्दों से निरपेक्ष सिद्ध करना चाहते हैं, तो यह अलग विषय है। लेकिन धर्म के परिप्रेक्ष्य को सामने रखकर क्या हम पन्थ को उसके मूल अर्थ के अनुसार भी निरपेक्ष सिद्ध कर सकते हैं? हमे इस विषय पर भी चिन्तन कर लेना चाहिए! पन्थ या सम्प्रदाय समाज का विघटन करके उसके प्रातिक स्वरूप को नष्ट कर देते हैं।
तुम निरपेक्षता को तो तत्वहीन सिद्ध नहीं करना चाहते हो विवेक। .....इस बार आदित्य उससे प्रश्न करता है। वह आगे कहता है .....मेरे विचार से तुम्हें धर्मनिरपेक्षता के दर्शन का व्यापक अध्ययन करना चाहिए। क्योंकि ऐसा नहीं है कि समाज उस विषय-वस्तु के बारे में नहीं जानता है जिसे तुम दोहरा रहे हो बल्कि यह सत्य है कि समाज परम्पराओं के स्थापित ढाँचे में नियोजित है और निरपेक्षता का दर्शन इसका स्वाभाविक सन्तुलन-कर्ता है। तुम्हारा विचार समाज की स्थापित व्यवस्था के सामने गम्भीर चुनौति उत्पन्न करता है। तुम्हे प्रस्तुत विषय पर इस दृष्टिकोण से भी चिन्तन कर लेना चाहिए। .....आदित्य अपनी प्रश्न सूचक टिप्पणी पूरी करता है तो इस पर विवेक अपना पक्ष प्रस्तुत करता है- मेरा निरपेक्षता के अस्तित्व को तत्वहीन सिद्ध करने का कोई विचार नहीं है आदित्य। लेकिन निरपेक्षता अपने मूल अर्थ के विपरीत समाज का वर्गीकरण करने वाले विचार का कवच बनी रहे या स्वीकार कर ली जाए, मैं किसी भी परिस्थिति में ऐसा होने के विरूद्ध हूँ।
वह कैसे?.....वह पुनः प्रश्न करता है।
कोई भी दृष्टिकोण प्रत्येक परिस्थिति के सापेक्ष रहे तो यह सार्वभौमिक सिद्धान्त नहीं हो सकता है। निरपेक्षता अपने मूल अर्थ के अनुसार मानवता के सापेक्ष विषय है लेकिन यह धर्म के साथ जुड़कर मानवता के सापेक्ष नहीं रह जाता है क्योंकि ऐसा होने पर हम धर्म को जड़ रूप में स्वीकार कर लेते हैं। यदि हम रूढियों को समाज का आदर्श बताने वाले व्यक्तियों के समूह को निरपेक्षता के माध्यम से सन्तुलित करना चाहते हैं तो इससे समाज में भ्रम ही पैदा होने वाला है। क्योंकि हम यदि सम्प्रदाय (पन्थ) के गुण-दोष का विभाजन करते हैं तो पाते हैं कि

सम्प्रदाय तो स्वाभाविक रूप से निरपेक्ष हो ही नहीं सकता है। क्योंकि समाज की तुलना में सम्प्रदाय तो किन्हीं व्यक्तियों के समूह के पक्ष एवं परम्पराओं को सिद्ध करने के लिए बना है। सम्प्रदायवाद की धारणा को तो समाज के किसी वर्ग विशेष द्वारा इसलिए स्वीकार किया जाता है कि समाज के अन्य वर्ग उसके रूढ़ एवं परम्परागत क्षेत्र में हस्तक्षेप न कर सके। जबकि धर्म, समाज का इस प्रकार विभाजन नहीं करता है। हमे यह सत्य सहजता पूर्वक स्वीकार कर लेना चाहिए कि धर्म तथा सम्प्रदाय समानार्थी शब्द नहीं हैं। धर्म का मूल तत्व व्यक्ति को सार्वभौमिक चेतना का एहसास कराता है और सम्प्रदाय का मूल तत्व समाज के अप्राकृतिक वर्गीकरण का। (एक संक्षिप्त अवधि के लिए चुप होकर वह पुनः बोलता है-) विषय को इस प्रकार प्रस्तुत करने का मेरा यह आशय है कि समाज का जो वर्ग समाज को एकात्म रूप से स्वीकार नहीं करता है क्या वह निरपेक्षता के मूल तत्व का त्याग नहीं कर देता है? ऐसा होने पर हम इसे निरपेक्षता के माध्यम से कैसे सन्तुलित कर सकते हैं। समाज में साम्प्रदायिक विवादों के होने का यह मूल कारण है। इस कार्य को सन्तुलित रूप से निष्पादित करने के लिए हमे धर्म का ही मार्ग चुनना होगा। मूलतः धर्म को निरपेक्ष कहने का कोई प्रयोजन नहीं हो सकता है। क्योंकि धर्म को हम अनेक नाम से नहीं जान सकते हैं, इसका कोई बहुवचन भी नहीं होता है। बल्कि धर्म से तो निरपेक्षता स्वतःस्फूर्त होती है जो समाज का सार्वभौमिक मार्गदर्शन करती है। हमे निश्चित रूप से इस तथ्य को स्वीकार करना होगा कि हम कभी भी धर्म को निरपेक्ष कहकर समाज में साम्प्रदायिक सन्तुलन की स्थापना नहीं कर सकेगें। इस समस्या का उन्मूलन धर्म तथा सम्प्रदाय (कथित धर्म) के स्वाभाविक अन्तरविरोध को स्वीकार कर, साम्प्रदायिक रूढ़ीवाद का त्याग कर देना है अन्य कुछ भी नहीं। हमे समाज को वैचारिक आधार पर इस कार्य के लिए तैयार करना होगा।

यदि तुम ऐसा कहते हो तो तुम्हें यह भी स्वीकार करना होगा कि तुम भारत के सम्पूर्ण व्यवस्था तन्त्र को चुनौती दे रहे हो। इसे क्या हम अपना संवैधानिक दोष कह सकते हैं?....वह विवेक से अन्य प्रश्न करता है।

मेरा यह विचार मानव समाज के परिप्रेक्ष्य में है। व्यक्ति मात्र को सार्वभौमिक आधार पर आचरणगत रूप से ऐसी धारणा स्वीकार करनी चाहिए। लेकिन हम इस समय भारत की व्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में चिन्तन कर रहे हैं जिसके विषय

में तुम्हारा यह कथन ठीक है कि यह हमारी व्यवस्था का संवैधानिक दोष है। यह परिभाषा शब्द के नैसर्गिक अर्थ को नकारने का विषय भी है। इस विषय में यह अवधारणा प्रकट की जा सकती है कि व्यक्ति या व्यक्तियों का कोई समूह जब भी अपनी रूढ इच्छाओं का नियमन सन्तुलन के विरूद्ध किसी रूढ सिद्धान्त के रूप में करता है तो समाज अव्यवस्थित हो जाता है। भारतीय समाज की संवैधानिक व्यवस्था में धर्म इस विषय का स्पष्ट साक्ष्य है। मूलतः हम अपनी व्यवस्था का नियमन करते हुए अपनी संस्कृति का विश्लेषण करने में भी असमर्थ रहे हैं, जो हमे स्पष्ट संकेत देती है कि धर्म न तो राज्य द्वारा आहूत होने वाला विषय है और न समाज द्वारा। धर्म तो केवल विषय-वस्तु के व्यक्तिगत आचरण का विषय है, जो व्यवहार में व्यक्ति के चरित्र को व्यवस्थित एवं स्वावलम्बी बनाता है। यह धर्म का विशिष्टतम लक्षण है कि यह व्यक्ति का मार्गदर्शन तो करता है लेकिन इसका किसी भी प्रकार नेतृत्व नहीं करता, क्योंकि धर्म तो आचरण के रूप में प्रकट होता है। भारतीय संस्कृति के वैदिक काल के संदेश इस विषय को बिल्कुल स्पष्ट कर देते हैं।

लेकिन इस विषय में भारत की सनातन विचार धारा का नाम जुडते ही क्या भारतीय समाज के सभी सम्प्रदाय इस तथ्य को सार्वभौमिक आधार पर स्वीकार कर लेगें? यह तो हमारे लिए और भी भ्रामक एवं अस्थिर स्थिति बन जाएगी! क्योंकि मैं यह स्वीकार करता हूँ कि भारतीय समाज का साम्प्रदायिक विभाजन राज्य का प्रश्रय पाए हुए है और अब इस कुव्यवस्था पर राज्य का कोई नियन्त्रण भी नहीं रहा है। ऐसे में यदि भारत में सरकार द्वारा कोई नई व्यवस्था लागू करने का प्रयास भी किया जाता है तो यहाँ निश्चित ही भारी अव्यवस्था फैल जाएगी, क्या इस विषय में तुमने कुछ सोचा है?

विवेक उसे सम्बोधित करते हुए कहता है-हम (भारतीय समाज) अपने नीतिहीन नेतृत्वकर्ता से मिले दिशाहीन मार्गदर्शन के कारण अपने लक्ष्य से भटक गए हैं। ऐसा होने के कारण हम लोग, लोक सत्ता से ज्यादा राज्य सत्ता को प्रभावी मानने लगे हैं। इसलिए हम राज्य को समाज का व्यवस्थापक न मानकर, इस पर नियन्त्रणकर्ता के रूप में स्वीकार करते हैं। मूलतः जो राज्य एवं उसके द्वारा शासित परिक्षेत्र में रहने वाला व्यक्ति समूह सत्ता के इस रूप को स्वीकार करते हैं, निश्चय ही वहाँ से अराजकता के प्रभाव को कोई भी व्यवस्था-तन्त्र नष्ट नहीं

कर सकता है। .....हमे व्यवस्था के उत्तरदायित्व को परिभाषित करने के लिए इस सिद्धान्त को स्वीकार करना होगा कि लोकतन्त्र में व्यवस्था का नियामक राज्य नहीं होता बल्कि समाज होता है। व्यवस्था के इस प्राकृतिक स्वभाव को नकारने के लिए ही राज्य सदैव समाज पर नियन्त्रण करने की चेष्टा करता रहता है। हमे इस स्थिति में इस तथ्य पर भी भली-भांति विचार कर लेना चाहिए कि तन्त्र की दृष्टि से व्यवस्था तथा नियन्त्रण, दोनों अलग-अलग विषय हैं। जीवन के लिए इनका परिभाषित अर्थ भी अलग-अलग है तथा प्रयोग की स्थिति के अनुसार इनकी विधि भी अलग-अलग होनी चाहिए। अलबत्ता व्यवस्था के ढंग को स्पष्ट करने के लिए मैं आप लोगों के सामने यह तर्क भी प्रस्तुत करूँगा कि हमारे राज्य ने समाज के सभी सम्प्रदायों की निष्ठा केवल स्वयं से जोड़ने के लिए उनकी श्रद्धा के विषयों को अपने नियम के रूप में प्रस्थापित करके एक ओर तो सम्प्रदायों को शक्तिशाली बना दिया है और दूसरी ओर उन्हें सामाजिक विभाजन का विधिक आधार देकर, उलटे समाज के विभिन्न वर्गों का नेतृत्व करने के लिए स्वतन्त्र कर दिया है। ऐसा होने पर समाज की प्रति के विरूद्ध इसमें निहित विभिन्न सम्प्रदाय तथा अन्य संगठन इस भ्रामक स्थिति में फंस गए हैं कि वे ही लोक व्यवस्था के अधिष्ठाता हैं। जबकि लोक व्यवस्था का ध्येय राज्य के द्वारा समाज के प्रति उत्तरदायी होने में पूरा होता है न कि राज्य के द्वारा सम्प्रदाय, समूह एवं जातियों के प्रति उत्तरदायी होने में।